जीवित एवं मृत अहंकार

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,
पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

अहंकार विनाश का मूल है। अहंकार का अर्थ है– घमण्ड करना। अहंकारी व्यक्ति अपने को ही सब कुछ समझता है। दूसरे के अस्तित्व को वह नकारता है। क्रोध, मान, माया, लोभ चंडाल चौकड़ी हैं। इनमें से एक के आ जाने पर शेष तीन अपने आप आ जाते हैं। विद्या, धन, पद, प्रतिष्ठा, सामाजिक उन्नति आदि का अहंकार प्रायः सबको होता है। अहंकारी व्यक्ति अपने विरुद्ध एक भी शब्द सुनना पसन्द नहीं करता। अहंकार तो एक ही प्रकार का होता है। अहंकार की उत्पत्ति प्रकृति तत्व से होती है। प्रकृति से महत्, महत् से अहंकार उत्पन्न होता है। मैं रूपवान हूं, मैं धनवान हूं, मैं शक्तिसम्पन्न हूं, मेरे अधीन सब कोई है। इस प्रकार की आरोपित अनुभूति ही अभिमान है। अहंकार से पांच ज्ञानेन्द्रियां, पांच कर्मेन्द्रियां तथा मन इन ग्यारहों का समूह तथा शब्द, स्पर्श, रूप, रस एवं गन्ध नामक पांच तन्मात्राएं उत्पन्न होती हैं। इन्द्रियों से विषयों का ग्रहण होता है। इन्द्रियां विषयों को ग्रहण करके मन को प्रदान करती है। इस विषय का मैं अधिकारी हूं, इसे करने में मैं समर्थ हूं, ये विषय मेरे लिए ही है इत्यादि रूपों में व्यवहार करने की जो हमारी प्रकृति है उसे ही अभिमान कहते हैं। अभिमान अहंकार की एक विशेष शक्ति है। मैं हूं अथवा यह वस्तु मेरी है इस प्रकार के अभिमान रूप, अहंकार का आश्रय करके ही बुद्धि अपना कार्य करती है। अहंकार दो विभिन्न प्रकार के तत्वों को जन्म देता है। जीवित अहंकार सबको दिखाई देता है। रामायण में रावण का अहंकार जीवित अहंकार था। जीवित अहंकार तृण के समान दूसरों को महत्व नहीं देता। यह अहंकार विनाश करके ही शान्त होता है। यह बहुत ही घातक है। इसलिए त्याज्य है।

मृत अहंकार द्रव्य क्षेत्र, काल और भाव की खुराक पाकर यदाकदा जागृत होता है। प्रत्येक मनुष्य में अहंकार होता है। कुछ लोग मर्यादा में रहकर अहंकार को शान्त कर देते हैं। कुछ लोग अहंकार का नग्न प्रदर्शन करते हैं। इससे कुछ समय के लिए भले ही लोग उनकी

अधीनता स्वीकार करें किन्तु कुछ समय के बाद समय उन्हें स्वयं शिक्षा दे देता है। परिणामस्वरूप अहंकार समाप्त हो जाता है। प्रकाश और अन्धकार की भांति जीवन में उत्थान और पतन चलता रहता है। वर्तमान जीवन में प्राप्त होने वाला पुण्य और पाप पूर्वजन्म में किये गये कर्मों के परिणाम है। इन्हें अवश्य भोगना पड़ता है। अहंकार के वैकृत नामक सात्विक अंश से ग्यारह इन्द्रियों की उत्पति होती है। इसलिए इन्हें सात्विक कहते हैं। पंचमहाभूत अर्थात् अहंकार के तामस अंश से पंच तन्मात्राओं की उत्पत्ति होती है। तन्मात्राएं तमोगुण विशिष्ट होती हैं।

अहंकार के रजोगुण के अंश में दोनों प्रकार के गुणों की उत्पति मानी गई है क्योंकि रजोगुण ही सत्व एवं तम दोनों को प्रेरित कर विकृत होने को बाध्य करता है। अतः दोनों प्रकार प्रकाशक एकादश इन्द्रियां एवं जड़ तन्मात्राएं रजोगुण के कार्य होते हैं। सात्विक सत्व गुण है जिसे प्रकाश एवं लाघव होता है। चूंकि एकादश इन्द्रियों में प्रकाशक तत्व एवं लाघव होता है। अतः वह सत्वगुण के ही कार्य हो सकते हैं। जिस अहंकार में रजस् एवं तमस् को दबाकर सत्व गुण की अधिकता होती है उसकी विकृत संज्ञा होती है। परस्पर क्षुब्ध होने पर वे एक–दूसरे से मिलकर प्रवाहित होने लगते हैं। इस अवस्था से ही प्रकृति के महान और उससे अहंकारादि उत्पत्ति सम्भव होती है। इस प्रकार गुणों के परस्पर सहयोग से विकृति सत्व की होती है। इसलिए इसे विकृत अहंकार कहा जाता है। सत्व गुण तमस् एवं रजस् को दबाकर प्रबल हो जाता है उसी से मन सहित दसों इन्द्रियों की उत्पति होती है। अतः ये इन्द्रियां सात्विक कही गयी है।

पंचमहाभूत जड़ होते हैं। उनकी उत्पति जिन तन्मात्राओं से होती है वह भी जड़ ही है। जड़ता ही तमोगुण का धर्म है। अतः अहंकार तमोगुण का कार्य है। सत्व एवं तम स्वयं निष्क्रिय है। रजोगुण गतिशील होने से गति प्रदान करता है उसकी सहायता से सत एवं तम अलग–अलग प्रकार की सृष्टि की उत्पति करते हैं। सत्व एवं तम का प्रेरक होने के कारण रजोगुण दोनों प्रकार के परस्पर विलक्षण प्रकाशक एवं जड़ की उत्पति होती है। आंख, कान, नाक, जिह्वा तथा त्वचा ये पांच ज्ञानेन्द्रियों के नाम है। वाणी, हाथ, पैर, पायु और उपस्थ कमेन्द्रियों के नाम है। कर्मेन्द्रियों और ज्ञानेन्द्रियों के माध्यम से प्राणी को ज्ञान प्राप्त होता है। आत्मा इन्द्रियों का

स्वामी है। जो ज्ञान एवं क्रिया के माध्यम से इनका उपयोग करता है। आत्मा की सत्ता अनुमानगम्य है। इन्द्रियों के माध्यम से आत्मा ज्ञान प्राप्त करता है।

अहंकार के निकृष्ट सत्व की प्रधानता होने पर कर्मेन्द्रियों की उत्पति होती है। बोलने की क्रिया जिस इन्द्रिय से सम्पन्न होती है उसे वाक् कहते हैं। जिससे वस्तुओं का आदान–प्रदान होता है उसे पाणि कहते हैं। जिससे गमनागमन की क्रिया होती है उसे पाद कहते हैं। पायु से मल, मूत्र का विसर्जन होता है। उपस्थ जननेन्द्रिय को कहते हैं। मन ज्ञानेन्द्रिय और कर्मेन्द्रिय दोनों से सम्बन्धित है। मन जिस इन्द्रिय के साथ संयुक्त होता है वही ज्ञान प्राप्त होता है। एक साथ एक ही इन्द्रिय के साथ मन का योग हो पाता है। मन इन्द्रिय के माध्यम से सामग्री बुद्धि तक पहुंचाता है। बुद्धि निश्चयात्मिका होती है। निर्णय करना बुद्धि का काम है। इस प्रकार जीवित एवं मृत अहंकार जीव के बंधन का कारण है।